ISSN : 0975-5403

वाङ्मय

शोध, साहित्य और सामाजिक सरोकार की अर्द्धवार्षिकी

वर्ष : 5, संयुक्तांक, जनवरी-जून एवं जुलाई- दिसम्बर, 2013

सम्पादक : डॉ. अनिल कुमार विश्वकर्मा

मूल्य रु. 35/-

ISSN : 0975-5403

बालकों के व्यक्तित्त्व निर्माण में शिक्षा का योगदान

एन. मोहना (शोधार्थी)
डॉ. [illegible]

शिक्षा शब्द संस्कृत की 'शिक्ष' धातु से बना है जिसका है –सीखना, अध्ययन करना, ज्ञानार्जन करना। 'शिक्षा' का अंग्रेज़ी अनुवाद 'एजूकेशन' (Education) है। 'एजूकेशन' (Education) शब्द लेटिन भाषा के 'एजूकेटम' (Educatum) शब्द से व्युत्पन्न है। 'एजूकेटम' शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है– 'ई' (E) और 'केटम' (Catum)। 'ई' (E) का अर्थ है अन्दर से और 'केटम' (Catum) का अर्थ है 'आगे बढ़ना या अग्रसर करना' अर्थात् 'To lead forth'। इसके अतिरिक्त लेटिन भाषा के अन्य दो शब्दों से भी यह संबंधित है– (i) एजूकेट (Educate) जिसका अर्थ है – To bring up, to raise. (ii) एजूकेयर (Educare) जिसका अर्थ है– To bring forth, to lead out.

शिक्षा का अर्थ है– " अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करना"[1]

पं. नेहरू के शब्दों में " शिक्षा से सन्तुलित मानव का विकास करने, और बालकों को समाज के लिए लाभप्रद कार्यों को करने और सामूहिक जीवन में भाग लेने के लिए तैयार करने की आशा की जाती है।"[2]

"Education is supposed to develop an integrated human being and to prepare young people to perform useful functions for society and to take part in collective life." -Jawahar Lal Nehru.

"The objective of education is to prepare the young to educate themselves throughout their lives." – Robert . M. Hutchins

एडिसन के विचार में " शिक्षा के द्वारा मानव के अन्तर में निहित उन सभी शक्तियों तथा गुणों का दिग्दर्शन होता है, जिनको शिक्षा की सहायता के बिना अन्दर से बाहर निकालना नितान्त असम्भव है।"[3]

"सचमुच विद्या वही है, जो व्यक्ति को सभी ओर से अंधकार और सभी तरह के बंधनों से मुक्त करती है।" बापू की सीख इसी प्रकार की थी।[4]

बापू के जीवन – कार्य और उनका जीवन–संदेश हमें विभिन्न बंधनों से मुक्ति प्राप्त करने में सक्षम बनाते हैं। इसमें मन, स्वभाव और शरीर के हर प्रकार के बंधन आते हैं। वे व्यक्ति और समाज को अज्ञान, असत्य, दुराग्रह जैसे मानसिक बंधन तथा गरीबी, बीमारी, दुर्बलता और पीड़ा जैसे आर्थिक और शारीरिक बंधनों से मुक्त कराकर उनका आध्यात्मिक विकास करना चाहते थे, ताकि देश के संपूर्ण विकास के लिए वह अपनी क्षमता के विशाल क्षितिज पर पहुँच सकें। उन्होंने हमें जाति, पंथ और क्षेत्र इत्यादि पर आधारित संकीर्णताओं से उबरने को प्रवृत्त किया।

शिक्षा हर एक व्यक्ति के जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। आम जनता भी शिक्षा के द्वारा ही इस समाज में अपने–आपको पूर्ण रूप से निरूपित कर सकता है।[5]

शिक्षा के संदर्भ में हमारे तने वर्तमान काल में विकसित हो रहे हैं और हमारी कोपलें भविष्य काल में खुलती हैं। जैसे कमल के पौधे भविष्य की तरफ देखते हैं और बढ़ते हैं लेकिन पोषण तो नीचे के कीचड़ में से प्राप्त करते हैं वैसे ही हमें भविष्य की ओर रूख करते समय भूतकाल में से जरूरी पोषण प्राप्त करना चाहिए।

शिक्षा तभी प्रभावपूर्ण बन सकती है जब वह उद्‌देश्यपूर्ण हो। उद्‌देश्य के ज्ञान के अभाव में शिक्षक उस नाविक के समान है जो अपने लक्ष्य को नहीं जानता है एवं बालक नौका के समान स्वयं थपेड़े खाकर किनारे पर जा लगेगा। उद्‌देश्य ज्ञात होने से ही आत्मबल बढ़ता है एवं दृढ़ता आती है जिससे व्यक्ति एकाग्रचित होकर समर्पित भाव से कार्य करता है।

शिक्षा के लक्ष्यों का महत्व उसके तीन सामान्य कार्यों के कारण से है– प्रथम, वे शैक्षिक क्रियाओं को एक निश्चित दिशा प्रदान करते हैं। यदि इस प्रकार की दिशा न हो तो सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया उस जहाज के समान होगी जो कि अथाह विस्तृत सागर में बिना किसी निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर बढे घूम रहा है जिसको पहुँचने का स्थान भी पता नहीं। द्वितीय शैक्षिक लक्ष्य शैक्षिक प्रक्रिया को सक्रिय बनाये रखने की प्रेरणा देते हैं। यह लक्ष्य मानव मूल्यों पर आधारित होते हैं जो विद्यार्थी एवं शिक्षक दोनों को ही अपनी शक्ति इन उद्‌देश्यों की प्राप्ति में लगाने के लिए उत्प्रेरित करते हैं। तृतीय–विभिन्न स्तरों एवं क्षेत्रों में शैक्षिक प्रक्रिया से प्राप्त होने वाले परिणामों का मूल्यांकन एवं मापन करने के लिए यह शैक्षिक लक्ष्य हमें आधार प्रदान करते हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा–नीति 1986 द्वारा प्रस्तावित शिक्षा के उद्‌देश्य इस प्रकार है–

1.परम्परागत मूल्यों की रक्षा
2.वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास
3.मानव संसाधन का विकास
4.समाजवाद के मूल्यों का विकास
5.सम्प्रदाय–निरपेक्षता के मूल्यों का विकास
6.प्रजातन्त्र के मूल्यों का विकास
7.भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता का विकास
8.व्यावसायिक नैतिकता का विकास
9.अन्तर्राष्ट्रीय भावना का विकास

व्यक्तित्व निर्माण एवं सर्वांगीण विकास का सशक्त साधन– शिक्षा :

शिक्षा ज्ञान का आधार है। ज्ञान प्राप्त करना एक सतत प्रक्रिया है। वह किसी निश्चित समय पर जा कर समाप्त नहीं होता। ज्ञान के विस्फोट की गति इतनी तीव्र है कि किसी समय जो ज्ञान

पचास वर्ष में पैदा होता था, आज उससे कहीं अधिक ज्ञान पाँच और तीन वर्षों में पैदा हो रहा है।

हजारों साल पहले तमिल के महान् कवि तिरुवल्लूवर ने शिक्षा को सर्वश्रेष्ठ धन बताते हुए कहा था :

शिक्षा धन है मनुजु हित, अक्षय और यथेष्ट।
अन्य सभी संपत्तियाँ, होती हैं नहीं श्रेष्ठ।।[6]

प्राथमिक शिक्षा ही वह नींव है जिस पर शिक्षा जगत की विशाल इमारत टिकी हुई है।[7]

प्राथमिक शिक्षा यदि सुदृढ़ है तो शिक्षा जगत की सम्पूर्ण इमारत चिरकाल तक अपनी मजबूती और सौन्दर्य बनाए रख सकती है। शिक्षा में गुणवत्ता का सवाल तो प्राथमिक शिक्षा पर ही निर्भर है। अतीत में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का अध्ययन करें तो पायेंगे कि शिक्षा का लक्ष्य व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करना था।

आजकल बच्चों में शाश्वत मूल्यों एवं दायित्वबोध का संचार किया जाना चाहिए। नैतिक मूल्य तो प्रत्येक व्यक्ति के अंदर में होते हैं, उन्हें बाहर लाने की आवश्यकता है; इसलिए विद्यालय का वातावरण सहज और सरल होना चाहिए। छोटे बच्चों के समक्ष साम्प्रदायिक एकता, देश की अखण्डता व भाईचारे का भाषण देना एकदम निरर्थक है। प्रतिदिन प्रार्थना सभा में पौराणिक, शिक्षाप्रद कहानियाँ व रोचक किस्सों के माध्यम से उद्देश्य की सिद्धि संभव है।

आज संस्कारयुक्त शिक्षा की सर्वाधिक आवश्यकता है। शिक्षा मनुष्य को सुसंस्कृत एवं सभ्य बनाने का हेतु है। मनुष्य के मानसिक, नैतिक, आर्थिक एवं शारीरिक विकास के लिए शिक्षा का बड़ा मूल्य है। देश और स्वयं का सर्वांगीण विकास शिक्षा से ही सम्भव है। अतः यह आवश्यक है कि देश में उपलब्ध संसाधनों में जनसहभागिता इस तरह होनी चाहिए कि वे विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास में मददगार हो सकें।

चरित्र राष्ट्र का आधार है। शिक्षा के द्वारा बालकों के चरित्र निर्माण के लिए सुसंस्कारपूर्ण कहानियाँ सुनाई जानी चाहिए ताकि निर्भय, सत्यवादी और बलिष्ठ बन सकें। बालक गुरुजनों एवं बड़ों के आगे विनयी, नम्र एवं आज्ञाकारी हो। वे ऐसा भाव जाग्रत करने हेतु समाज में सुचरित्र वाले व्यक्ति को विद्यालय में आमन्त्रित कर, उसका सम्मान कर, बालकों के सत्संग द्वारा एक अच्छे चरित्र का निर्माण हो सकता है जो राष्ट्र के विकास को सर्वोपरि बना देगा।

समाज में विभिन्न व्यक्ति, विभिन्न कार्यों में कार्यरत हैं जैसे– नर्सरी टीचर ट्रेनिंग, ब्यूटी कोर्स, टंकण एवं आशुलिपि कार्य, फैशन डिजाइनिंग, पोषाहार एवं भोजन परिरक्षण, टेलरिंग कार्य आदि। इन सभी व्यक्तियों के साथ बालकों को जोड़कर उन्हें विशेष प्रकार के कार्य करने की ट्रेनिंग दी जा सकती है। शिक्षा में उन सभी परिस्थितियों पर ध्यान दिया चाहिए जिनमें वैयक्तिकता का पूर्ण रूप से विकास हो सके।

शारीरिक विकास एवं स्वास्थ्य रक्षा हेतु लक्ष्य :

बच्चों में मानसिक विकास के साथ–साथ शारीरीक विकास पर पर्याप्त ध्यान देना अपेक्षित है। आज के समाज का रुझान आर्थिक एवं भौतिक विकास की तरफ अधिक है। शारीरिक विकास को शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मानकर ही शारीरिक शिक्षा की गतिविधियों तथा खेलों के प्रति जागरूकता उत्पन्न करना अनिवार्य है। शारीरिक स्वास्थ्य के लिए प्रत्येक विद्यार्थी को किसी–न–किसी खेल में भाग लेना अनिवार्य बनाया जाए। छात्रों की शारीरिक क्षमता की जाँच करके उन्हें विशिष्ट खेल में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाना आवश्यक है। शारीरिक शिक्षा के पाठ्यक्रम को लागू करने, मूल्यांकन–प्रक्रिया में नियमितता लाने के अतिरिक्त बच्चों को ओलम्पिक, एशियाड तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं के बारे में पूर्ण जानकारी दी जानी चाहिए। स्वास्थ्य रक्षा और वर्तमान परिस्थितियों में रोगों से बचाव की जानकारी देना आवश्यक है।

"शिक्षा सर्वांगीण विकास का मूलाधार है, जो भौतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा पर ही टिका हुआ है, राष्ट्रीयता के विकास में भी शिक्षा की अहं भूमिका है।"[8]

एक व्यक्ति को शिक्षा राष्ट्र–सेवा के प्रति समर्थ बनाती है। राष्ट्रीयता का विकास मानव के स्वयं के विकास पर निर्भर है। विद्यालय स्तर से ही छात्र के विकास की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। सच्चे–शिक्षक छात्रों के सुषुप्त गुणों को विकसित कर करने में समर्थ होते हैं। शिक्षा राष्ट्र और समाज के सुखद भविष्य की कल्पनाओं को साकार रूप देने का सर्वाधिक सशक्त साधन माना जाता है। शिक्षा व्यक्ति के संस्कारों को शुद्ध करती हुई उसके रहन–सहन, बोलचाल तथा व्यवहार पर अपना अमिट प्रभाव डालती है। यदि बच्चों को बचपन से ही सही और गलत, सत्य और असत्य का बोध कराया तो वे आगे चलकर प्रगति के मार्ग से भटकेंगे नहीं। शिक्षक का कार्य पथप्रदर्शन करना है। यह कार्य शिक्षा द्वारा ही सम्भव है।

संदर्भ–

1. शिक्षा की आवश्यकताएँ, डॉ. नरेश कुमार, विज्ञान भारती, बी–78, सूर्यनगर, गाजियाबाद, उ.प्र. 2001, पृष्ठ –9
2. शिक्षा सिद्धान्त एवं आधुनिक भारत की शिक्षा, डॉ. महेन्द्र कुमार मिश्र पृष्ठ –4
3. शिक्षा की आवश्यकताएं, डॉ. नरेश कुमार, विज्ञान भारती, बी–78, सूर्यनगर, गाजियाबाद, उ.प्र. 2001 पृष्ठ –12
4. शिक्षा दिशा और दृष्टिकोण, डॉ.शंकर दयाल शर्मा, प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली–110030, 2004, पृष्ठ –142
5. राष्ट्रीय शिक्षा का आदर्श, आचार्य काका साहेब कालेलकर, गांधी हिन्दुस्तानी साहित्य सभा, नई दिल्ली– 110002, 2006 पृष्ठ –76
6. शिक्षा दिशा और दृष्टिकोण, डॉ. शंकर दयाल शर्मा, प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली–110030, 2004, पृष्ठ –142
7. शिक्षा, शिक्षार्थी और शिक्षक, डॉ.रामपालसिंह, कलासन प्रकाशन, बीकानेर, 2003, पृष्ठ– 16
8. प्राथमिक शिक्षा ज्योति, डॉ. संत शरण शर्मा, अमर प्रकाशन, मथुरा, 2010 पृष्ठ –42

हिन्दी विभाग,
शोध निर्देशिका– डॉ. शशी प्रभा जैन,
एन. मोहना, पी.एच–डी
अविनाशिलिंगम विश्वविद्यालय,
कोयम्बत्तूर, तमिलनाडु